# प्रथम अध्याय

# शोध परिचय

# अध्याय – प्रथम

# शोध परिचय

## 1.1 प्रस्तावना –

शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव के अभ्यास से परिवर्तनशील शक्तियों को अच्छी आदतों द्वारा तथा कलात्मक ढ़ंग से निकाले गये साधनों द्वारा पूर्णता प्रदान की जाती है तथा जिन, साधनों का प्रयोग कोई भी व्यक्ति अपने लिए या दूसरों की सहायता के लिए निर्दिष्ट उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रयुक्त करता हैं।

**पेस्टालॉजी (1782)** के अनुसार " मानव की आन्तरिक शक्तियों का स्वाभाविक सामंजस्य पूर्ण एवं प्रगतिशील विकास ही शिक्षा हैं।"

शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है साथ ही व्यक्ति के जीवन में शिक्षा का महत्व सबसे अधिक है। इसका कार्यक्षेत्र इतना व्यापक है कि व्यक्ति अपने जीवन को सुखी तथा सफल बनाते हुए सामाजिक कार्यो को उचित समय पर पूरा करने के योग्य बन जाता है। सामान्य रूप से शिक्षा व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों का नियंत्रण, मार्गान्तीकरण करते हुए उसकी जन्मजात शक्तियों के विकास में इस प्रकार सहायता प्रदान करती हैं कि उसका सर्वांगीण विकास हो जाये। यही नहीं शिक्षा व्यक्ति में चारित्रिक तथा नैतिक गुणों एवं सामाजिक भावनाओं को विकसित करके उसे प्रौढ़ जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करती है कि वह अपनी संस्कृति तथा सभ्यता का संरक्षण करते हुए उत्तम नागरिक के रूप में सामाजिक सुधार करके राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति देने में भी नहीं हिचकिचाता। शिक्षा मानवीय जीवन में व्यक्ति को जहाँ एक ओर वातावरण से अनुकूलन करने तथा उसमें आवश्यकतानुसार

परिवर्तन करते हुए भौतिक सम्पन्नता को प्राप्त करके चरित्रवान, बुद्धिमान, वीर तथा साहसी उत्तम नागरिक के रूप में आत्मनिर्भर बनाकर उसका सर्वांगीण विकास करती है वहीं दूसरी और शिक्षा राष्ट्रीय जीवन में व्यक्ति के अंदर राष्ट्रीय एकता, भावात्मक एकता, सामाजिक कुशलता तथा राष्ट्रीय अनुशासन आदि भावनाओं को विकसित करके उसे इस योग्य बना देती है कि वह सामाजिक कर्तव्यों को पूरा करते हुए राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता देने के लिए ओत-प्रोत हो जाता है। संक्षेप में, शिक्षा सामान्य तथा राष्ट्रीय जीवन में इतने कार्य करती है, जिससे व्यक्ति तथा समाज निरंतर उन्नति के शिखर पर चढ़ता चला जाता है।

शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, परन्तु व्यक्ति के जीवन में प्रारंभिक शिक्षा का महत्व सबसे अधिक है प्रारंभिक शिक्षा किसी भी राष्ट्र की प्रगति का मूल आधार है, यह पहली सीढ़ी है जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही कोई राष्ट्र अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ संबंध प्रारंभिक शिक्षा का है उतना उच्च शिक्षा का नहीं है। राष्ट्रीय विचारधारा एवं चरित्र का निर्माण करने में जितना महत्वपूर्ण स्थान प्रारंभिक शिक्षा का है उतना किसी दूसरी सामाजिक, राजनैतिक या शैक्षणिक गतिविधि का नहीं है। प्रारंभिक शिक्षा का संबंध किसी विशेष व्यक्ति या वर्ग से न होकर देश की पूरी जनसंख्या से होता हैं। इसका हर कदम पर हर व्यक्ति के जीवन से संपर्क होता है, इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सब व्यक्तियों की शिक्षा अथवा जनसाधारण की शिक्षा ही राष्ट्रीय प्रगति का मूलाधार है। इसका उत्थान करके ही हमारे देश का विकास हो सकता है।

## 1.2 प्रारंभिक शिक्षा हेतु विभिन्न आयोगों की संस्तुतियाँ–

"मेरे विचार से जनसाधरण की अवहेलना करना महान राष्ट्रीय पाप है। और हमारे पतन के कारणों में से एक है। अब राजनीति उस समय तक विफल रहेगी, जब तक कि भारत में जनसाधरण, को एक बार फिर भली प्रकार शिक्षित नहीं कर लिया जायेगा।"

अतः इन विचारों को ध्यान में रखते हुए जब सन् 1950 को हमारे देश का संविधान लागू हुआ तो संविधान की धारा 45 के अंतर्गत यह कहा गया, "राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से दस वर्ष के भीतर 6 से 14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का प्रयास करेगा।" परन्तु यह लक्ष्य हम आज भी प्राप्त नहीं कर सके है परन्तु ऐसा नहीं है कि इस दिशा में प्रयास नहीं किये वरन् इस दिशा में निरतंर प्रयास किये जाते रहे हैं, जैसे कि कोठारी आयोग (1964–66) ने शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करते हुए बताया "शिक्षा का मुख्य उद्देश्य सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाना है।" इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें प्रारंभिक शिक्षा का लोकव्यापीकरण करना होगा, परन्तु प्रारंभिक शिक्षा के लोकाव्यापीकरण में मुख्यतः तीन पक्ष बाधक हैं।

1. अपव्यय
2. अवरोधन
3. निम्न गुणात्मक स्तर।

प्रारंभिक शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन की चर्चा करते हुए भारतीय शिक्षा आयोग (1966) ने कहा–

" सिरदर्द और बुखार के समान अपव्यय और अवरोधन व स्वयं रोग नहीं है। वे वास्तव मे शिक्षा व्यवस्था के अन्य रोगों के लक्षण है तथा हमारी शिक्षा व्यवस्था में अपव्यय और अवरोधन की मात्रा अत्यन्त विशाल है।

भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा दिऐ गये सुझावों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) मे अपव्यय व अवरोधन की समस्या को अत्यन्त गंभीरता से लिया गया तथा सुझाव दिया कि बीच में पढ़ाई छोड़कर जाने वाले बच्चों की समस्या के समाधान को उच्च प्राथमिकता देने और बड़ी सावधानीपूर्वक कार्ययोजना तैयार की जाये, ताकि बच्चों का स्कूल मे शिक्षा जारी रखना सुनिश्चित किया जा सके ।

इस प्रकार प्रशासनिक तौर पर अपव्यय एवं अवरोधन की मात्रा कम की जा सकती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा कार्यवाही योजना 1992 में प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण को प्राथमिकता दी है। इसमे प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण को प्राप्त करने के लिए कहा गया था। राज्यों तथा संधीय प्रदेशों से विचार-विमर्श करके निम्नलिखित रणनीतियाँ निर्धारित की गयीः-

- नामांकन के विस्तार के स्थान पर शाला त्याग की दर को कम करने तथा विद्यार्थियों को विद्यालयों मे रोके रखने के लिए बल दिया गया।
- विद्यालय प्रणाली के विकल्पों पर विचार किया गया कामकाजी बच्चों तथा समाज के दुर्बलतर वर्गो के बच्चों के लिए अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ बनाने पर बल दिया गया।

- शैक्षिक रूप से पिछड़े राज्यों के स्थान पर शैक्षिक रूप से पिछड़े जिलों पर ध्यान दिया गया।
- जिला विशेष तथा जनसंख्या विशेष के लिए योजनाएँ बनाने पर बल दिया गया।
- न्यूनतम अधिगम स्तर के निर्धारण पर बल दिया गया।
- विद्यालय की स्थिति, शिक्षक की क्षमता, उनके प्रशिक्षण तथा प्रेरणा मे सुधार लाया जाये।
- लोगों की सहभागिता पर बल दिया जाय। आयोजन तथा प्रबन्ध में पंचायत राज संस्थाओं, ग्राम शिक्षा समितियों द्वारा महत्वपूर्ण भूमिकाएँ प्रदान की जाये ।

## 1.3 प्रारंभिक शिक्षा के लिए संचालित कार्यक्रमों का विवरण –

प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं:–

(1) लोक जूम्बिश कार्यक्रम राजस्थान में 1992 मे सीडा के सहयोग से सर्व शिक्षा के लिए एक जन आन्दोलन चलाया गया जो कि लोक जुम्बिश नामक परियोजना के नाम से प्रसिद्ध है। इसके मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है।

1. 14 वर्ष तक की प्रारंभिक शिक्षा सभी बालकों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना ।
2. यह सुनिश्चित करना कि सभी बच्चे स्कूल / अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों मे उपस्थित होकर प्रारंभिक शिक्षा को पूर्ण करें ।
3. शिक्षा को पर्यावरण से सम्बधित करना ।
4. शिक्षा के आयोजन तथा प्रबंध में लोगों को सक्रिय बनाना।

5. इस परियोजना में सभी बच्चों को गुणात्मक दृष्टि से अच्छी शिक्षा देने पर बल दिया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार 21वीं शताब्दी के आंरभ होने से पूर्व 14वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क अनिवार्य तथा संतोषजनक गुणों वाली शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण के लक्ष्य को तीन व्यापक प्रांचलो –(1) सर्वव्यापी पहुँच (2) सर्वव्यापी धारणा (3) सर्वव्यापी उपलब्धि मे बाँटा गया है। केन्द्र तथा राज्य /संघीय क्षेत्रों की सरकारों के प्रयासों के बावजूद देश की 94% ग्रामीण जनसंख्या के लिए एक किलोमीटर की दूरी में प्रारंभिक विद्यालय उपलब्ध हो पाये हैं। जबकि 84% जनसंख्या के लिऐ उच्च प्रारंभिक विद्यालय, तीन किलोमीटर दूरी में उपलब्ध है। इन प्रयासों के फलस्वरूप नामांकन में वृद्धि हुई है। परन्तु नीरस और बोझिल प्रारंभिक शिक्षा बच्चों की मानसिक क्षमता के विकास में सफल नहीं हो सकी। शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए न्यूनतम अधिगम स्तरों के लिए कदम उठाये गये।

भारत ने 1991 में अधिगम के न्यूनतम स्तरों को प्रारंभिक स्तर पर निर्धारित करने की पहल की इसके लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान का एक तंत्र कायम किया गया है।

अन्य कार्यक्रम शिक्षाकर्मी योजना,जनशाला, प्रारंभिक शिक्षा गारण्टी योजना और वैकल्पिक एवं नई तरह की शिक्षा, अध्यापक शिक्षा योजनाएँ, सर्व शिक्षा अभियान, राष्ट्रीय बाल भवन, जिला प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम राष्ट्रीय प्रारंभिक शिक्षा मिशन, निःशुल्क एवं अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा के

अधिकार को मौलिक अधिकार में परिवर्तन करने का प्रस्ताव सभी कार्यक्रम प्रारंभिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, अपव्यय व अवरोधन की समस्या के समाधान हेतु तथा शिक्षा को सभी वर्गों तक पहुँचाने के लिए चलाऐ जा रहे है।

देश की प्रतिबद्धता के अनुरूप सभी बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात्, शैक्षिक सुविधाओं का अत्यधिक प्रसार हुआ है। देश में प्रारंभिक विद्यालयों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इस व्यापक प्रसार के फलस्वरूप जिन शैक्षिक सुविधाओं का प्रसार हुआ है, वे संस्थागत संरचना, अध्ययन, अध्यापन प्रक्रियाओं तथा विद्यालयों से उत्तीर्ण होकर निकले छात्रों की योग्यता की दृष्टि से गुणवत्ता में व्यापक रूप से भिन्न है। गुणवत्ता की यह भिन्नता कुछ राज्यों, ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के विद्यालयों, सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा संचालित विद्यालयों आदि में अधिक दिखाई देती है। गुणवत्ता संबंधी इस असंगत स्थिति ने प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में निम्न गुणात्मक स्तर की समस्याओं को जन्म दिया।

गुणवत्ता संबंधी असंगत स्थिति के सुधार की अविलम्ब आवश्यकता को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में इन बातों पर शीघ्र ध्यान देने का आह्वान किया गया है :-

1. विद्यालयों के अनाकर्षक परिवेश, भवनों की असंतोषजनक दशा और शिक्षण सामग्री के अभाव की दृष्टि से सुधार।
2. उन न्यूनतम अधिगम स्तरों का निर्धारण जिनकी विभिन्न शिक्षा स्तरों को पूरा करने वाले सभी छात्रों को संप्राप्ति होनी चाहिए। आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए गठित प्रारंभिक

बाल्यावस्था और प्रारंभिक शिक्षा के कार्यदल की रिपोर्ट में, इस नीति निर्देश को ध्यान में रखते हुए कहा गया–

**''लक्ष्यों का निर्धारण केवल सहभागिता की दृष्टि से नहीं, बल्कि गुणवत्ता और प्रतिफलों की दृष्टि से भी किए जाने की आवश्यकता हैं।''**

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान उन्नत संरचना एवं अध्यापक शिक्षा और अधिगम सामग्री की गुणवत्ता एवं परिभाषा में यथेष्ट सुधार के द्वारा शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाना हमारा उद्देश्य होना चाहिए। प्रतिफल की दृष्टि से यह सुनिश्चित करना होगा कि प्रारंभिक तथा उच्च प्रारंभिक स्तरों की सम्प्राप्ति के संदर्भ में, न्यूनतम अधिगम स्तरों का निर्धारण किया जाए और एक उपयुक्त मूल्यांकन प्रणाली तैयारी की जाए, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि, कम से कम निर्धारित अधिगम स्तरों की प्राप्ति तो होगी ही। इस संदर्भ में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग में 5 जनवरी 1990 के आदेश क्रमांक 74/3/89 डेस्क (टी.ई.) द्वारा न्यूनतम अधिगम स्तर समिति का गठन किया। इस समिति के विचारार्थ विषय निम्नलिखित थे–

1. कक्षा 3 और 5 के लिए न्यूनतम अधिगम स्तरों का निर्धारण।
2. शिक्षार्थी के व्यापक मूल्यांकन और जाँच पद्धति की सिफारिश।
3. अधिगम के असंज्ञानात्मक, क्षेत्रों में अध्यापन में सुधार लाया जा सके।

समिति को इस बात से भी अवगत कराया गया कि विचारार्थ विषय का संबंध शिक्षा की औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रणालियों से है।

प्रारंभिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने हेतु समय–समय पर विभिन्न शिक्षा आयोगों का गठन किया गया। शिक्षा के गुणात्मक सुधार

लाने हेतु इन आयोगों ने अनेक सुझाव दिये। कुछ लक्ष्य निर्धारित किए उनमें से न्यूनतम अधिगम स्तर सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु है।

इन आयोगों ने कहा कि हमारा लक्ष्य प्रत्येक विषय का निम्न गुणात्मक स्तर प्राप्त करना होना चाहिए, तब हम शिक्षा में गुणात्मक सुधार कर पायेंगे।

## 1.4 गणित क्या है ?

गणित, अंक, अक्षर तथा चिन्ह आदि संक्षिप्त संकेतों का वह विज्ञान है जिसकी सहायता से परिणाम, दिशा व स्थान इत्यादि का भलिभांति बोध हो सकता है, अंकगणित का शाब्दिक अर्थ है अंको अथवा संख्याओं का गणित दूसरे शब्दों में, संख्याओं का विज्ञान और गणना करने की कला है। पहले अंकगणित के अंतर्गत अंकों का ज्ञान और हल करने की कला दोनों को अलग-अलग रूपों में देखा जाता था, परन्तु 16वीं शताब्दी के पश्चात् इन दोनों को ही अंकगणित के अभिन्न रूप मानकर समान महत्व दिया जाने लगा। गणित की सभी शाखाओं में सबसे प्राचीन अंकगणित हैं। इसकी उत्पत्ति गिनती की आवश्यकता के फलस्वरूप ही हुई। धीरे-धीरे संख्याओं तथा अंकों की विस्तृत जानकारी और उनकी गणना संबंधी आवश्यकता ने ही अंकगणित का वर्तमान रूप में विकास कर दिया है सही अर्थों में जीवन को सुचारू रूप से चलाने और समाज को उन्नति के पथ पर अग्रसर करने में अंकगणित का बहुत बड़ा हाथ रहा है, इसमें कोई संदेह नहीं। अंकगणित के आधारभूत कौशल में पूर्णरूप से दक्षता प्राप्त होने पर ही अंकगणित सीख पायेंगे।

## 1.5 प्रारंभिक स्तर पर गणित का महत्व –

मानव ने आज प्रत्येक क्षेत्र में विशेष उपलब्धियाँ प्राप्त की है, चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र हो, चाहे स्वास्थ्य व चिकित्सा का, चाहे औद्योगिक विकास का, चाहे कृषि का, चाहे मनोरंजन का, इन सभी क्षेत्रों में जो उन्नति हुई है, उसमें गणित का योगदान प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में काफी महत्वपूर्ण रहा है। गणित के महत्व को हम निम्न प्रकार समझ सकते हैं।

**1. मनुष्य के विचारों एवं मनोभावों को प्रकट करने में गणित का महत्व :–**

बालक जब 2 या 3 साल का होता है तभी से उसकी गणित की शिक्षा घर पर ही प्रारंभ हो जाती है। वह किसी वस्तु को प्राप्त करते समय कम व अधिक के लिए कहता है तथा गिनती करके भी देखता है। इस प्रकार वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए अपने विचारों को गणित के माध्यम से प्रकट करता है।

**2. गणित का दैनिक जीवन में महत्व :–**

मनुष्य को अपने दैनिक जीवन में कदम–कदम पर गणित के ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। एक गृहणी को धोबी से कपड़े लेते व देते समय उन्हें गिनना पड़ता हैं, विभिन्न खाद्य सामग्री बनाते समय मसाले, तेल आदि के अनुपात का ध्यान रखना पड़ता हैं।

**3. गणित का विज्ञान में उपयोग व इसका सामाजिक महत्व :–**

आज विज्ञान की सभी शाखाओं में गणित का उपयोग अनिवार्य हो गया है, आज का भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, भू गर्भ विज्ञान, इंजिनियरिंग, खगोलशास्त्र, यहाँ तक कि जीव–विज्ञान भी गणित

की सहायता के बिना फल-फूल नहीं सकता। आज के शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि 'मनुष्य की चाँद पर विजय' भी गणित की सहायता से ही प्राप्त हो सकी है।

**4. चारित्रिक मूल्य कायम करने में गणित का महत्व :-**

मनुष्य में कुछ अच्छी आदतें होती हैं, जो उसके चरित्र की बुनियाद होती है। गणित की शिक्षा मनुष्य में इन्ही आदतों को डालती है तथा उनका विकास करती है। गणित के विद्यार्थी सत्य को सत्य व असत्य को असत्य ही बतलाते हैं, वे सही बात को सही ही कहते हैं तथा गलत को गलत। इस प्रकार गणित का अध्ययन मनुष्य में सत्य बोलने और सही कार्य करने की आदत डालता है। गणित का अध्ययन करने वाला स्पष्ट वक्ता होता है। गणित हमें शुद्धता सिखाती है।

**5. गणित का बौद्धिक महत्व :-**

जब कोई गणितीय समस्या बालक के सामने आती है तो उसका मस्तिष्क उसे समझने व हल करने में क्रियाशील हो जाता है, इस प्रकार प्रत्येक गणितीय समस्या का हल खोजने के लिए मानसिक प्रयास की आवश्यकता होती है।

जब बालक का मस्तिष्क क्रियाशील होता है तो उसमें विचार करना, तर्क करना, विश्लेषण और विवेचन करना आदि क्रियाएँ स्वतः ही संचालित हो जाती है। इस प्रकार क्रियाओं से बालक का बौद्धिक विकास होता है। इसी तरह गणित विषय में गुणवत्ता स्तर प्राप्त करने हेतु इस विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्त करने पर बल दिया जा रहा है।

## 1.6 प्रारंभिक स्तर पर गणित शिक्षण के उद्देश्य –

शिक्षार्थी को अपने घर, विद्यालय तथा समुदाय में संख्याओं तथा स्थान से संबंधित अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वे इन समस्याओं को ठीक तौर पर और जल्दी से हल कर सकें, इसके लिए उन्हें प्रारंभिक स्तर पर गणित सिखाना एक प्रमुख लक्ष्य हो जाता है। शिक्षार्थियों में गणित की प्रमुख अवधारणाओं की समझ विकसित करने के लिए उनके उपयुक्त अनुभवों को आधार बनाया जा सकता है। ये अनुभव शिक्षार्थियों के माहौल में पाई जाने वाली वस्तुओं से संबंधित होंगे। इसके लिए स्थूल से सूक्ष्म की ओर तथा विशिष्ट से सामान्य की ओर ले जाना उपयुक्त रहेगा।

अतः गणित के पाठ्यक्रम से निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति की अपेक्षा की जाती है।

- शीघ्रता एवं शुद्धता से गणना करने की योग्यता, समुचित चिन्हों का प्रयोग करते हुए मौखिक कथनों को गणितीय शैली में और रेखाचित्रों में रूपान्तरित करने की योग्यता।
- काफी हद तक सही मापों का अनुमान लगाने एवं आंकलन करने की योग्यता।
- दैनिक जीवन की साधारण समस्याओं को हल करने में गणितीय प्रत्ययों एवं कौशलों का प्रयोग करने की योग्यता।
- तार्किक ढंग से सोचने की योग्यता।
- क्रम एवं आकार पहचानने की योग्यता।
- अनुशासन की भावना का विकास।

– आत्मविश्वास, संयम, निरंतरता, मेहनत इन सभी भावनाओं का विकास करना।

## 1.7 गणित में न्यूनतम अधिगम स्तर –

प्रत्येक कक्षा के लिए आधारभूत गणितीय प्रत्ययों को शैक्षणिक क्रम के अनुसार सूचीबद्ध नहीं किया गया है, बल्कि उन्हें गणितीय दक्षताओं के निम्नलिखित पांच क्षेत्रों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है–

1. पूर्ण संख्याओं एवं संख्याओं को समझना।
2. पूर्ण संख्याओं को जोड़ने, घटाने, गुणा व भाग करने की योग्यता।
3. मुद्रा, लंबाई, भार, धारिता, क्षेत्र व समय की कठिनाईयों का उपयोग करने व इनसे संबंधित दैनिक जीवन की साधारण समस्याओं को हल करने की योग्यता।
4. भिन्न, दशमलव, प्रतिशत का प्रयोग करने की योग्यता।
5. ज्यामितीय आकारों एवं स्थानिक संबंधों को समझना।

## 1.8 गणित शिक्षण की उपयोगिता तथा अन्य विषयों से संबंध–

विद्यालय के सभी विषय शिक्षा को सर्वांगीण बनाने, बच्चे के व्यक्तित्व का समुचित विकास कर उसे समाज का महत्वपूर्ण अंग बनाने की दिशा में कार्य करते हैं। कार्यक्षेत्र अलग–अलग होते हुए भी लक्ष्य एक है, और एक ही लक्ष्य होने के नाते सभी विषय एक दूसरे के अध्ययन को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में थोड़ा बहुत सुगम और महत्वपूर्ण बनाते हैं। गणित इस दौड़ में अन्य विषयों से बहुत आगे है। इस विषय का अन्य सभी विषयों से प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से अटूट संबंध है। सभी के अध्ययन में गणित की आवश्यकता पड़ती है। अतः गणित का ज्ञान होना अति आवश्यक है।

1. **गणित और विज्ञान** – गणित और विज्ञान का संबंध तो शरीर और आत्मा का संबंध है। यह ठीक ही कहा जाता है कि "गणित विज्ञान का सिंहद्वार और कुंजी है।" विज्ञान के किसी भी अंग को चाहे वह भौतिक विज्ञान हो या रसायन विज्ञान, जीवशास्त्र या वनस्पतिशास्त्र सभी के अध्ययन के लिए गणित की आवश्यकता होती है।

2. **गणित और सामाजिक अध्ययन** – इतिहास समय एवं यथार्थ घटना चक्रों का ऐसा क्रमवार अध्ययन है, जिसमें पग-पग पर गणित की अवश्यकता होती है। समय के ज्ञान बिना किसी भी घटना या ऐतिहासिक तथ्य का कोई महत्व नहीं। इसी प्रकार भूगोल में, पृथ्वी का आकार, पृथ्वी की दैनिक गति, वार्षिक गति के फलस्वरूप दिन रात का बनना, वस्तु परिवर्तन, सूर्य एवं चन्द्र ग्रहण, ज्वारभाटा आदि सभी के अध्ययन में गणित की आवश्यकता पड़ती है।

   अर्थशास्त्र में उत्पादन, क्रय, वितरण, आदि का हिसाब गणित से ही लगाया जाता है।

3. **मनोविज्ञान और गणित** – मनोविज्ञान तो आजकल सांख्यिकीय विधियों और गणित संबंधी गणना और मापन के प्रयोग के कारण पूरी तरह गणित पर आश्रित होता जा रहा है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हरबर्ट ने ठीक ही कहा है कि मनोविज्ञान में गणित का प्रयोग केवल संभव नहीं वरन् आवश्यक है।

4. **गणित और भाषा** – किसी भी भाषा की कुंजी व्याकरण में ही है और व्याकरण सही अर्थों में भाषा का गणित ही है। विराम चिन्ह,

पद चिन्ह, वाक्य विग्रह, कर्ता, क्रिया, कर्म आदि का उचित स्थानों में प्रयोग गणित पर आधारित है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि स्कूल में पढ़ाए जाने वाले सभी विषयों में चाहे वह विज्ञान हो या कला, गणित का अटूट संबंध है। गणित न केवल सभी विज्ञानों का जीवनदाता है और पोषक है, वरन् सभी कलाओं में सम्मोहन मंत्र फूंकने वाला भी है ऐसा जान पड़ता है कि स्कूल के सभी विषय मोती की लड़ी है जिनमें गणित रूपी सोने का तार बहुत खूबसूरती से पिरोया हुआ है।

## 1.9 समस्या कथन –

प्रस्तुत अध्ययन की समस्या को निम्नलिखित प्रकार से शब्दांकित किया गया –

"प्रारंभिक स्तर के छात्र तथा छात्राओं की गणित विषय में होने वाली अधिगम कठिनाईयों की पहचान तथा निराकरण–एक अध्ययन"।

## 1.10 समस्या कथन में प्रयुक्त मुख्य अवधारणाएं–

1. **गणित**– अंक, अक्षर तथा चिन्ह आदि संक्षिप्त संकेतों का वह विज्ञान है जिसकी सहायता से परिमाण, दिशा व स्थान इत्यादि का बोध होता है।
2. **जोड़** – जोड़ प्रक्रिया के अंतर्गत एक ऐसा एकल अंक प्राप्त करते हैं, जो कि ली गई दो या दो से अधिक संख्याओं को जोड़ सकता है। जोड़ को "+" के द्वारा दर्शाया जाता है।

3. **घटाना** – घटाने की प्रक्रिया के अंतर्गत एक ऐसा एकल अंक प्राप्त करते है। जो कि ली गई संख्याओं का अंतर होता है। घटाना को "–" द्वारा दर्शाया जाता है।

4. **गुणा** – गुणा प्रक्रिया के अंतर्गत एक ऐसा एकल अंक प्राप्त करते है। जो कि दी गई दो या दो से अधिक संख्याओं का गुणनफल होता है। गुणा को "×" द्वारा दर्शाया जाता है।

5. **भाग** – भाग प्रक्रिया के अंतर्गत एक ऐसा एकल अंक प्राप्त करते है। जो कि दी गई बड़ी संख्या को छोटी संख्या में से विभाजित करने पर प्राप्त होती है। भाग को " ÷" द्वारा दर्शाया जाता है।

6. **अधिगम कठिनाईयाँ** – अधिगम कठिनाईयों से अभिप्राय विभिन्न विषयों व क्रियाओं को सीखने में होने वाली समस्याओं से है।

## 1.11 शोध के उद्देश्य –

1. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों को गणित विषय में होने वाली अधिगम कठिनाईयों की पहचान करना।
2. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं को गणित विषय में होने वाली अधिगम कठिनाईयों की पहचान करना।
3. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों को अंकगणित के आधारभूत कौशल (जोड़, घटाना, गुणा, भाग) में होने वाली अधिगम कठिनाईयों का अध्ययन करना।
4. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं को अंकगणित के आधारभूत कौशल (जोड़, घटाना, गुणा, भाग) में होने वाली अधिगम कठिनाईयों का अध्ययन करना।

5. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्र तथा छात्राओं की अधिगम कठिनाईयों के कारणों को जानना।

6. प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत छात्र तथा छात्राओं की गणित अधिगम कठिनाईयों के निवारण हेतु सुझाव देना।

## 1.12 शोध प्रश्न –

1. क्या कक्षा 5 में अध्ययनरत छात्र व छात्राओं द्वारा गणित विषय में होने वाली अधिगम कठिनाईयाँ समान है?
2. क्या कक्षा 5 में अध्ययनरत छात्र व छात्राओं द्वारा जोड़ संक्रिया के अंतर्गत होने वाली त्रुटियाँ समान है?
3. क्या कक्षा 5 में अध्ययनरत छात्र व छात्राओं द्वारा घटाना संक्रिया के अंतर्गत होने वाली त्रुटियाँ समान है?
4. क्या कक्षा 5 में अध्ययनरत छात्र व छात्राओं द्वारा गुणा संक्रिया के अंतर्गत होने वाली त्रुटियाँ समान है?
5. क्या कक्षा 5 में अध्ययनरत छात्र व छात्राओं द्वारा भाग संक्रिया के अंतर्गत होने वाली त्रुटियाँ समान है?

## 1.13 शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व –

प्रत्येक कक्षा में हम देखते है कि सभी बच्चे उतना नहीं सीख पाते जितना उन्हें सीखना चाहिए, कुछ बच्चों में तो उस कक्षा के लिये निर्धारित दक्षताओं का विकास हो जाता है। कुछ में नहीं। यह एक चिंता का विषय है। गणित पाठ्यक्रम का बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है। गणित का अध्ययन विद्यालय में सभी विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य है। यह अपेक्षा की जाती है कि बालक, बालिकायें शाला छोड़ने से पहले गणित के ज्ञान में प्रवीणता का कुछ स्तर प्राप्त कर लें। वर्तमान में गणित में अधिकांश

विद्यार्थियों के उपलब्धि का स्तर अपेक्षित स्तर पर नहीं होता है। विद्यार्थियों की असफलता का प्रमुख कारण है अंकगणितीय ज्ञान का कम होना तथा गणित के आधारभूत संक्रियाओं की सही जानकारी का अभाव।

कक्षा में बहुत से विद्यार्थी ऐसे होते हैं, जिनको पाठ्यक्रम में गणित के अलावा अन्य विषयों जैसे-विज्ञान, हिन्दी, अंग्रेजी आदि में रूचि होती है तथा उन विषयों में उनकी अच्छी पकड़ होती है, लेकिन गणित में कम या निम्न स्तर की वजह से अधिगम में कठिनाई होती है। इसी वजह से वह उससे दूर भागते है। उन्हें गणित की आधारभूत संक्रियाओं का सही ज्ञान नहीं होता है। उनमें वे गलतियाँ करते हैं और उन्हीं आधारभूत संक्रियाओं को ना जानने के कारण उन्हें प्रत्येक स्तर पर कठिनाई होती है। ऐसा नहीं है जो बच्चे गणित में कमजोर होते हैं वे हो सकता है कि वे अन्य विषयों में अच्छे हो। इस पृष्ठ भूमि ने मुझे यह जानने के लिए प्रेरित किया की विद्यार्थियों को गणित के अधिगम में कठिनाईयाँ किन-किन स्तरों पर होती है तथा उन कठिनाईयों को जानने के बाद उनको रोकने के क्या उपाय करें जिससे की वे उस तरह की गलतियाँ न करें।

## 1.14 सीमांकन –

प्रारंभिक स्तर पर गणित विषय के अधिगम में बहुत सी कठिनाईयाँ होती है, परन्तु समय, धन, श्रम की सीमा को ध्यान में रखते हुए केवल कुछ बिन्दुओं को ही प्रस्तुत अध्ययन में लिया गया है:-

1. यह छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के भिलाई नगर क्षेत्र के दो शासकीय तथा दो अशासकीय विद्यालयों तक सीमित है।
2. इसमें प्रारंभिक स्तर पर कक्षा-5 वीं के 120 विद्यार्थियों को लिया गया है।